सन्देश संख्या ४१

क्रियायोग की शुरुआत कैसे?

क्रियायोग की शुरूआत स्वाध्याय से और स्वाध्याय की शुरूआत साक्षीभाव से। हे क्रियायोगी! पहले साक्षी बनो, अकर्ता बनो, अकर्मण्य न बनो, निष्पक्ष होशियार बनो, साक्षी बनो।

भागो नहीं, त्यागो नहीं, जागो, द्रष्टा बनो, साक्षी बनो।

जिस त्याग में कर्ता है, कर्म है, कृत्य है, वह त्याग कैसा? वह तो हिसाब है, गणित है, गरिमा है। जिस त्याग में माता–पिता का दिया हुआ छोटा–सा प्यारा नाम त्याग कर '१००८ श्री महामण्डलेश्वर से शुरू करके परमहंस महाराज' तक की तीन पंक्तिवाला नाम लिखना पड़ता है –– वह कैसा त्याग हुआ? छोटा–सा गृहकोष त्यागकर करोड़पति मठाधीश बनना पड़ा तो कैसा त्याग हुआ? हे क्रियायोगी! भागो नहीं, जागो, साक्षी बनो।

नियन्ता नहीं, नियंत्रक नहीं, निर्णायक नहीं, हे क्रियायोगी! निर्मन बनो, साक्षी बनो।

गीता की यात्रा है – दुर्योधन से, अर्जुन होते हुए कृष्ण तक की, यानी कि विचारहीनता से विचार और फिर निर्विचार तक की। विचारों के बोझ तथा बन्धन से मुक्त परम प्रज्ञा ही निर्विचार–निर्विकार–निर्मन–निरंजन अवस्था है। निर्विचार विचारहीनता नहीं है। विचारों द्वारा उत्पन्न मनोरंजन–मनोत्तेजना नहीं है। हे क्रियायोगी! व्यभिचारी नहीं, ब्रह्मचारी नहीं, निर्विचारी बनो, साक्षी बनो।

अध्यात्म यानी आत्म–अध्ययन यानी स्व–अध्याय यानी स्वाध्याय यानी क्रियायोग की शुरूआत। बिना स्वाध्याय की साधना तो संघर्ष है, सर्कस है, आकांक्षा–आशंका की आपाधापी है, प्रलोभन की प्रक्रिया है। परन्तु प्रयोजन है समझ की, श्रद्धा की, समन्वय की, सजगता की, साक्षीभाव की। हे क्रियायोगी! आत्म निरीक्षक बनो, साक्षी बनो। हे क्रियायोगी! भूख–प्यास का, शोक–मोह का, जन्म–जरा–मरण का द्रष्टा बनो, साक्षी बनो। हे क्रियायोगी! न वृत्ति में, न आवृत्ति में, न प्रवृत्ति में, बल्कि निवृत्ति में रहो, साक्षी बनो।

हे क्रियायोगी! बन्द करो आत्म–विकास, बन्द करो आत्म–विस्तार, बन्द करो आत्म–विकृति, बन्द करो आत्म–व्यवस्था, बन्द करो आत्म –केन्द्रित गतिविधियाँ, बन्द करो आत्म–गरिमा, बन्द करो आत्म–गौरव, बन्द करो आत्म–तुष्टि, बन्द करो आत्म–पुष्टि, बन्द करो आत्म–नियंत्रण, बन्द करो आत्म–दमन। आत्मदर्शक बनो, आत्मनिरीक्षक बनो, आत्मबोधि बनो, साक्षी बनो।

हे क्रियायोगी! अनुष्ठान छोड़ो, अनुभव छोड़ो, अहंकार छोड़ो, अ–भाव में आओ, अस्तित्व में आओ, आनन्द में आओ। शब्दों के और शास्त्रों के संग्रह छोड़ो, सत्य का सौन्दर्य देखो, साक्षी बनो।

हे क्रियायोगी! पाण्डित्य में मत फँसो, प्रज्ञावान बनो। जानकारी में मत रहो, जानना सीखो, जागना सीखो, साक्षी बनो।

हे क्रियायोगी! यह समझ लो कि परावस्था अस्तित्व है, अनुभवों की जालसाजी के अन्दर यानी अहम्–केन्द्र के चक्रव्यूह के अन्दर की कोई घटना नहीं हैं। परावस्था तो सहज है, स्वभाव है, स्वरूप है, स्वधर्म है। अनुभवों से निर्मित अहम्भाव से परावस्था का उदय नहीं होता है। परावस्था परम धर्म है, परम प्रज्ञा है। ज्ञानी का बकवास इसे आच्छादित नहीं कर सकता। परावस्था कार्य–कारण की परिधि के बाहर का एक अनोखा अस्तित्व है। तुम्हारे द्वारा निर्मित या तुम्हारी कृति नहीं है। परावस्था जितना खोजोगे, उतना ही खोते जाओगे और फिर बनावटी परावस्था के आधार पर आध्यात्मिक मण्डी में दुकानें खोलोगे। दूसरे को धोखा दोगे, खुद भी धोखा खाओगे। इसलिए हे क्रियायोगी! समझदारी की ऊर्जा में रहो, साक्षी बनो।

क्रियायोगी की गरिमा उसके दृष्टिकोण में नहीं, बल्कि उसके द्रष्टाभाव में है, उसके साक्षीभाव में है। हे क्रियायोगी! साक्षी बनो।

हे क्रियायोगी। कुछ पकड़ोगे ही नहीं तो फिर छोड़ोगे क्या? जहाँ अनुराग नहीं, वीतराग नहीं, वहाँ तो वैराग्य है ही। परावस्था में जो क्रियायोग होता है, वही तो क्रिया है, नहीं तो सिर्फ प्रतिक्रिया है, प्रतिस्पर्धा है, प्रतिद्वन्द्विता है। चुनाव विहीन जीवन जीना सीखो, साक्षी बनो।

वास्तव में धर्म और शास्त्र सत्य की कसौटी हैं। उनमें सत्य को खोजना व्यर्थ है। उनसे सत्य को परखो। सत्य जैसा सोना तो तुम्हारे अन्दर है ही। जागकर इसे देख लो और शास्त्रों की कसौटी पर इसे परख लो। आध्यात्मिक मण्डी में प्रचलित धर्म और शास्त्रों से सत्य नहीं बल्कि सत्य की अवधारणायें मिलेंगी, झूठी सान्त्वनायें मिलेंगी, अनुकरण का उपकरण मिलेगा। अनुसरण में जीना हराम होगा। अनुकरण और अनुसरण द्वारा निरहंकारी का ढोंग रचकर अहंकार की ही पुष्टि करोगे। इसलिए तथाकथित शास्त्र और धर्म से उत्पन्न होता है इतना वाद–विवाद और वीभत्स हत्याकाण्ड। इन शास्त्रों का ज्ञान बन्धन है। ज्ञान से मुक्ति के लिए निर्मनावस्था में जागो, साक्षी बनो।

स्वाध्याय, तापस और ईश्वर प्रणिधान अर्थात् निरीक्षण, परीक्षण और जागरण – यही तो क्रियायोग है।